[2019] 4 उम. नि. प. 311

सुनील वासुदेव और अन्य

बनाम

सुंदर गुप्ता और अन्य

[2019 की सिविल अपील सं. 5140]

2 जुलाई, 2019

न्यायमूर्ति ए. एम. खानविलकर और न्यायमूर्ति अजय रस्तोगी

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 133 [सपठित आय-कर अधिनियम, 1961 की धारा 293 और सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 114] – अपील – राजस्व/आय-कर प्राधिकारी/प्राधिकारियों के विरुद्ध सिविल वाद का वर्जन – पुनर्विलोकन – आधार – आक्षेप – यदि अभिलेख पर के साक्ष्यों से यह साबित कर दिया जाता है कि राजस्व/आय-कर प्राधिकारी/प्राधिकारियों के विरुद्ध सिविल वाद फाइल नहीं किया जा सकता है तो इसके अतिलंघन में फाइल कोई भी वाद विधि में मान्य नहीं होगा और उसके निमित्त पुनर्विलोकन आवेदन भी ग्रहण नहीं किया जा सकता है – यदि यथाविहित विधि के सिद्धांतों के अतिलंघन में कोई आदेश और निर्णय पारित किया जाता है तो वह अविधिमान्य और कायम रखे जाने योग्य नहीं होगा ।

वर्तमान मामले में, प्रत्यर्थी सं. 1, 2 और 3 (रिट याचियों) किरोड़ीमल लोहरीवाला के प्रपौत्र हैं और प्रेमचंद गुप्ता के पुत्र हैं, दोनों अब मृत हैं, जो हिन्दू संयुक्त कुटुम्ब गठित करते थे और जो अपने संयुक्त नामों में कलकत्ता में अन्य संपत्तियों के साथ-साथ संपत्ति सं. 43, पृथ्वीराज रोड, नई दिल्ली (विषयवस्तु की संपत्ति) को धारित करते थे । वर्तमान अपीलार्थियों ने स्व. वी. एन. वासुदेव के विधिक उत्तराधिकारी होना अभिकथित किया है, जो आय-कर व्यवसायी था और

स्व. किरोड़ीमल लोहरीवाला का वकील था, ने आय-कर विभाग द्वारा तारीख 18 अगस्त, 1964 को आयोजित खुले नीलामी में विषयवस्तु की संपत्ति को 2,60,000/- रुपए के प्रतिफल में क्रय किया था और वाद संपत्ति के संबंध में विक्रय प्रमाणपत्र तारीख 1 अप्रैल, 1965 को जारी किया गया था । अगस्त, 1957 में स्व. किरोड़ीमल लोहरीवाला ने उक्त संपत्ति जिसमें अन्य संपत्तियां सम्मिलित थीं, को स्वअर्जित संपत्तियों के रूप में दावा करते हुए, प्रेमचंद गुप्ता के विरुद्ध कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष 1957 की वाद सं. 1451 संस्थित किया और मध्यावधि में, कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा उक्त विषयवस्तु की संपत्ति के लिए एक शासकीय रिसीवर नियुक्त किया गया था, जिसने 1 मई, 1958 को उक्त संपत्ति का कब्जा ले लिया था । उक्त संपत्ति (43, पृथ्वीराज रोड, नई दिल्ली) तारीख 18 अगस्त, 1964 को 2,60,000/- रुपए के कुल रकम में स्व. वी. एन. वासुदेव के हिन्दू संयुक्त कुटुम्ब के सदस्य शम्भू राम किरोड़ीमल के अभिकथित आय-कर बकायों की वसूली के लिए आय-कर विभाग द्वारा आरंभ प्रमाणपत्र कार्यवाहियों के अधीन विक्रय किया जाना तात्पर्यित था । इस प्रक्रम पर, स्व. किरोड़ीमल लोहरीवाला ने वी. एन. वासुदेव की ऐसी तात्पर्यित विक्रय के विरुद्ध आक्षेप उद्भूत किया, इस कारण से कि कलकत्ता उच्च न्यायालय से इसकी इजाजत नहीं ली गई है जिसे यद्यपि, तारीख 26 फरवरी, 1965 को मुख्य आयुक्त, दिल्ली द्वारा उलट दिया गया था । उसी समय पर, आकयर विभाग द्वारा 1957 की उक्त वाद सं. 1451 में एक आवेदन फाइल किया गया यह प्रार्थना करते हुए कि – (क) दिल्ली की संपत्ति का विक्रय करने के पूर्व न्यायालय की इजाजत लेने में लोप को माफ किया जाए और (ख) वी. एन. वासुदेव के पक्ष में दिल्ली की संपत्ति का उक्त विक्रय को पूरा करने की इजाजत दी जाए और उसे प्रभाव में लाने की भी इजाजत दी जाए । जिला संग्रहण अधिकारी, दिल्ली द्वारा स्व. वी. एन. वासुदेव के पक्ष में तारीख 18 अगस्त, 1964 के उक्त तात्पर्यित विक्रय की पुष्टि करने के प्रयोजन से विक्रय की पुष्टि का प्रमाणपत्र जारी किया गया था । इस प्रक्रम पर, कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा भारत संघ के तारीख 8 सितम्बर, 1965 के आवेदन पर आय-कर विभाग को यह स्वतंत्रता देना मंजूर कर लिया कि वह दिल्ली की संपत्ति को बेहतर क्रेता या क्रेताओं के लिए लोक नीलामी या

प्राइवेट संधि द्वारा विक्रय के लिए रखे ताकि उसके लिए बेहतर मूल्य प्राप्त किया जा सके । कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा 8 सितम्बर, 1965 को पारित पश्चात्वर्ती आदेश का प्रभाव यह होगा कि जिला संग्रहण अधिकारी, दिल्ली के आदेश के संदर्भ में नीलामी विक्रय की पुष्टि के लिए इस न्यायालय के समक्ष परीक्षा करना उपयुक्त नहीं होगा । प्रत्यर्थी सं. 1 से 3 ने भारत संघ और वर्तमान अपीलार्थियों के विरुद्ध कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष तारीख 18 अगस्त, 1964 की नीलामी के अधीन स्व. वी. एन. वासुदेव को दिल्ली की संपत्ति के तात्पर्यित विक्रय के बारे में 1985 की सी. ओ. सं. 18500 (रिट) के अधीन रिट याचिका फाइल की, यह घोषणा करने के लिए कि तारीख 18 अगस्त, 1964 का तात्पर्यित विक्रय और दिल्ली की संपत्ति के संबंध में तारीख 1 अप्रैल, 1965 के विक्रय की पुष्टि का प्रमाणपत्र जारी करने को अकृत और शून्य घोषित किया जाए और विषयवस्तु की संपत्ति को आय-कर प्राधिकारियों द्वारा कुर्की के अधीन बनाए रखा जाए । भारत संघ द्वारा फाइल आवेदन पर पारित कलकत्ता उच्च न्यायालय के तारीख 8 सितम्बर, 1965 के आदेश की सहायता लेते हुए, जिसका निर्देश किया गया था, संबंधित पक्षकारों द्वारा शपथपत्र/प्रति-शपथपत्र फाइल किए गए थे और रिट याचिका 1985 की सी. ओ. सं. 18500 (रिट) की सुनवाई हुई थी और कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा मार्च/अप्रैल, 1986 में निर्णय को आरक्षित रखा गया था और लगभग साढ़े चार वर्षों के पश्चात्, उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा निवेदनों पर विचार करते हुए, तारीख 26 अक्तूबर, 1990 को रिट याचिका खारिज कर दिया गया था और यह निष्कर्ष निकाला गया था कि चूंकि रिट याचियों को जिला न्यायाधीश, दिल्ली के न्यायालय के समक्ष वाद फाइल करने का वैकल्पिक उपचार प्रतिस्थापित कर दिया गया है जो यद्यपि, उस तारीख तक लंबित रहा जब तक निर्णय आरक्षित रहा (1985 की वाद सं. 471), उच्च न्यायालय के समक्ष उद्भूत सभी मुद्दों जिन्हें 1985 की वाद सं. 471 के लंबित रहने के दौरान पक्षकारों को उठाने के लिए खुला रखा गया था, किन्तु तथ्य यह है कि 1985 की वाद सं. 471 जो उस तारीख तक लंबित था, जब उच्च न्यायालय द्वारा आरक्षित रखा गया था, जिसे मार्च/अप्रैल, 1986 में सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 9 के नियम 2 के अधीन मुख्य

प्रतिवादियों को नोटिस तामील नहीं होने के कारण तारीख 3 अक्तूबर, 1986 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था और पक्षकारों में से किसी भी पक्षकार ने इस तथ्य की पश्चात्वर्ती प्रगति के बारे में न्यायालय की नोटिस में नहीं लाया, जिसका निर्देश किया गया है । इसके तत्काल पश्चात्, प्रतिवादी सं. 1 से 3 ने तारीख 26 अक्तूबर, 1990 के आदेश को वापस मंगाने/अपास्त करने और गुणागुणों पर रिट याचिका का विनिश्चय करने के लिए एक आवेदन फाइल किया । पक्षकारों की सुनवाई करने के पश्चात्, कलकत्ता उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने तारीख 20 नवम्बर, 1998 के अपने आदेश के अधीन प्रत्यर्थी सं. 1 से 3 द्वारा फाइल आवेदन को मंजूर कर लिया और गुणागुणों पर मामले की सुनवाई करने का निर्देश देते हुए, विषय-वस्तु की संपत्ति के बारे में संव्यवहार करने से वासुदेव को अवरुद्ध करते हुए, तारीख 26 अक्तूबर, 1990 के आदेश को वापस मंगा लिया । वर्तमान अपीलार्थियों ने तारीख 20 नवम्बर, 1998 के आदेश के विरुद्ध अपील प्रस्तुत की । कलकत्ता उच्च न्यायालय के खंड न्यायपीठ ने तारीख 17 अगस्त, 2001 के अपने आदेश के अधीन तारीख 20 नवम्बर, 1998 के पुनर्विलोकन आवेदन पर आदेश वापस मंगाने के आदेश में हस्तक्षेप किए बिना अपील (1999 की एम. ए. टी. सं. 87) का निपटारा किया, किन्तु जैसा कि अभिलेखों से प्रतीत होता है, वर्तमान अपीलार्थियों ने तारीख 17 अगस्त, 2001 के आदेश को नोट करने के पश्चात्, इस न्यायालय के समक्ष 2001 की विशेष इजाजत याचिका (सिविल) सं. 22491 को प्रस्तुत करना समुचित समझा, जिसे आरंभिक प्रक्रम पर ही तारीख 10 जनवरी, 2002 को खारिज कर दिया गया था । इसके पश्चात्, वर्तमान अपीलार्थियों ने 1985 की रिट याचिका सं. 18500 (रिट) के निपटारे में 2005 की सी. ए. सं. 3557 के अधीन आवेदन फाइल किया, अन्य बातों के साथ-साथ, यह प्रार्थना करते हुए कि प्रत्यर्थियों को वाद संपत्ति का विक्रय करने के लिए किसी भी विज्ञापन की कार्यवाही करने से अवरुद्ध कर दिया जाए क्योंकि इस प्रकार की कोई स्वतंत्रता उच्च न्यायालय द्वारा नहीं दी गई है । उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने पक्षकारों की सुनवाई करने के पश्चात्, यह अभिनिर्धारित किया कि उच्च न्यायालय के समक्ष कुछ भी लंबित नहीं था और इस प्रकार, तारीख 31 मार्च, 2006 के अपने आदेश के अधीन

पूर्वोक्त प्रकीर्ण आवेदन को कायम नहीं रखे जाने योग्य अभिनिर्धारित किया । उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा पारित तारीख 31 मार्च, 2006 के आदेश को अपील में प्रत्यर्थियों द्वारा चुनौती दी गई, जिसे तारीख 19 अक्तूबर, 2012 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया, प्रत्यर्थियों की इस स्वतंत्रता के साथ कि दिल्ली में उसी वाद हेतुक पर नए सिरे से वाद फाइल कर सकते हैं, यदि इस प्रकार सलाह दी जाती है । प्रत्यर्थियों ने तारीख 19 अक्तूबर, 2012 के आक्षेपित निर्णय और तारीख 31 मार्च, 2006 के आदेश के विरुद्ध भी 2012 की आर. वी. डब्ल्यू. सं. 272 के अधीन पुनर्विलोकन आवेदन प्रस्तुत किया । तारीख 24 सितम्बर, 2014 के आक्षेपित आदेश द्वारा तारीख 19 अक्तूबर, 2012 के आदेश का पुनर्विलोकन किया गया और परिणामस्वरूप, तारीख 31 मार्च, 2006 के आदेश को अपास्त कर दिया गया और 1985 की रिट याचिका सं. 18500 (रिट) को इसके अपने गुणागुणों पर सुनवाई करने का निदेश दिया गया । इससे व्यथित होकर वर्तमान अपील फाइल की गई । माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभिलेख पर की सामग्रियों से यह प्रकट होता है कि विषयवस्तु की संपत्ति (43, पृथ्वीराज रोड, नई दिल्ली) आय-कर विभाग द्वारा आरंभ प्रमाणपत्र कार्यवाहियों में 18 अगस्त, 1964 को शम्भूराम किरोड़ीमल, संयुक्त हिन्दू कुटुम्ब के सदस्य से 2,60,000/- रुपए की रकम के आय-कर बकायों की वसूली के लिए नीलामी क्रेता स्व. वी. एन. वासुदेव को विक्रय किया जाना तात्पर्यत थी । किरोड़ीमल ने वी. एन. वासुदेव को ऐसे तात्पर्यित विक्रय का विरोध किया क्योंकि इसके लिए कलकत्ता उच्च न्यायालय से इजाजत नहीं ली गई थी जिसे मुख्य आयुक्त, दिल्ली द्वारा उलट दिया गया था और तारीख 26 फरवरी, 1965 के आदेश द्वारा वी. एन. वासुदेव के पक्ष में तात्पर्यित विक्रय की पुष्टि कर दिया गया था । इस प्रक्रम पर, 1957 की वाद सं. 1451 में आय-कर विभाग द्वारा आवेदन फाइल किया गया, यह प्रार्थना करते हुए कि – (क) दिल्ली की संपत्ति को विक्रय के लिए रखने के पूर्व न्यायालय से इजाजत लेने में लोप को माफ किया जाए और (ख) वी. एन. वासुदेव के पक्ष में दिल्ली की संपत्ति के उक्त विक्रय को पूरा करने की इजाजत दी जाए और उसे प्रभाव में देने की भी इजाजत दी जाए । आय-कर

विभाग द्वारा फाइल आवेदन पर, कलकत्ता उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने पक्षकारों के विरोधी दलीलों को नोट करने के पश्चात् तारीख 8 सितम्बर, 1965 को आदेश पारित किया । आय-कर अधिनियम, 1961 की धारा 293 राजस्व/आय-कर प्राधिकारी के विरुद्ध किसी भी सिविल न्यायालय में वाद फाइल करने से पूर्णतया वर्जित करता है और विधि का समादेश तब तक नोटिस जारी करने पर रोक बनाए रखता है, जब तक कि उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा 1985 की रिट याचिका सं. 18500 (सिविल) में आदेश पारित नहीं कर दिया जाता है, जिसका विनिश्चय तारीख 26 अक्तूबर, 1990 को हुआ जब जिला न्यायाधीश, दिल्ली के समक्ष 1985 की सिविल वाद सं. 471 के अभिकथित लंबित रहते हुए पक्षकारों के नाम हटाने का आदेश दिया गया था, यद्यपि, इसे तारीख 26 अक्तूबर, 1990 का निर्णय उद्घोषित करने के ठीक पूर्व खारिज कर दिया गया था । एलपीए में उच्च न्यायालय के खंड न्यायपीठ ने प्रत्यर्थियों को दिल्ली में स्थित विषय-वस्तु संपत्ति के संबंध में नया सिविल वाद फाइल करने की स्वतंत्रता दी थी और पक्षकारों में किसी भी पक्षकार ने आय-कर अधिनियम, 1961 की धारा 293 के अधीन परिकल्पित विधि के इस समादेश को न्यायालय के नोटिस पर नहीं लाया कि आय-कर विभाग के विरुद्ध सिविल वाद, विधि के अधीन कायम रखे जाने योग्य नहीं है, जिसे पक्षकारों के विरोधी दावों पर निष्कर्ष निकालते समय न्यायालय द्वारा भूल से लोप किया जाना प्रतीत होता है । उच्च न्यायालय द्वारा अपने पुनर्विलोकन अधिकारिता में इसे नोट नहीं किया गया था और यह निष्कर्ष निकाला गया था कि अभिलेख पर आमुख पर ही प्रकट त्रुटि प्रतीत होती है और परिणामत: तारीख 19 अक्तूबर, 2012 के आदेश को वापस मंगाने के लिए पुनर्विलोकन आवेदन मंजूर कर लिया था और प्रकीर्ण आवेदन में पारित तारीख 31 मार्च, 2006 के निर्णय और आदेश को अपास्त कर दिया था और 1985 की रिट याचिका सं. 18500 (सिविल) को प्रतिस्थापित करते हुए, इसके गुणागुणों पर सुनवाई करने के लिए तारीख 24 सितम्बर, 2014 का आक्षेपित निर्णय दिया था । आय-कर अधिनियम, 1961 की धारा 293 के प्रभाव का पुनर्विलोकन में निर्णय के अधीन भूल से लोप किया गया है और इसके अलावा भारत संघ द्वारा 1957 की सिविल वाद सं. 1451 में फाइल तारीख 8 सितम्बर, 1965

के आवेदन पर उच्च न्यायालय के आदेश के पारिणामिक प्रभाव से रिट कार्यवाहियों में परीक्षा किया जाना अनुज्ञात हो गया और यह पुनर्विलोकन आवेदन के उत्तर में आय-कर विभाग द्वारा प्रतिरक्षा था और इस न्यायालय के समक्ष भी अपने इस प्रति-शपथपत्र में कि नीलामी विक्रय में जिसे अगस्त, 1964 में आयोजित किया गया था, न्यायालय से अनुज्ञा प्राप्त नहीं की गई थी और उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा 1957 की वाद सं. 1451 में तारीख 8 सितम्बर, 1965 के उनके आवेदन पर आदेश पारित करने के पश्चात् प्रश्नगत विषय संपत्ति के संदर्भ में, आय-कर विभाग द्वारा आयोजित विक्रय नीलामी निश्चित तौर पर प्रभावित होगी और कार्यवाहियों में सभी प्रकार से उनका यही आधार था । न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि कलकत्ता उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने 1985 की रिट याचिका सं. 18500 (सिविल) को सुना और मार्च/अप्रैल, 1986 के लिए निर्णय को आरक्षित रखा और तारीख 26 अक्तूबर, 1990 को लगभग साढ़े चार वर्ष पश्चात् उद्घोषित निर्णय में जिला न्यायाधीश, दिल्ली के समक्ष लंबित सिविल वाद में अपनी प्रतिरक्षा में सभी दलीलों को उद्भूत करने से पक्षकारों को निकालने से स्वयमेव ही यह उपदर्शित होता है कि एकल न्यायाधीश गुणागुणों पर अपनी राय अभिव्यक्त करने के लिए सहमत नहीं थे, सुस्पष्टतया, इस कारण से कि यदि निष्कर्ष अभिलिखित किया जाता है तो यह जिला न्यायालय, दिल्ली में लंबित अभिकथित वाद में परीक्षा किए जाने वाले मुकदमे में पक्षकारों के अधिकारों के प्रतिकूल रूप से प्रभावित करेगा जिसे यद्यपि उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा तारीख 26 अक्तूबर, 1990 को निर्णय उद्घोषित करने के ठीक पूर्व तारीख 3 अक्तूबर, 1986 को खारिज कर दिया गया था । दिए गए तथ्यों और परिस्थितियों में, न्यायालय, कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष प्रत्यर्थियों की प्रेरणा पर फाइल 1985 की रिट याचिका सं. 18500 (सिविल) में उद्भूत गुणागुणों पर विवाद्यकों का विस्तृत वर्णन नहीं करना चाहता है, किन्तु, यदि सिविल वाद कायम रखे जाने योग्य नहीं था, जैसा कि आय-कर अधिनियम, 1961 की धारा 293 को ध्यान में रखते हुए अभिकथित किया गया है और यह प्रत्यर्थियों तथा आय-कर विभाग का तात्पर्यित प्रतिरक्षा था और तारीख 8 सितम्बर, 1965 के आदेश का पारिणामिक प्रभाव जिसके प्रतिनिर्देश न्यायालय के समक्ष

किया गया है, से पक्षकार को कोई उपचार नहीं मिल सकता है और विधि के न्यायालय के समक्ष पक्षकार का जो भी शिकायत होता है, उस पर उसके स्वयं के गुणागुणों पर परीक्षा किया जाता है । न्यायालय के सुविचारित राय में, उच्च न्यायालय ने अपनी पुनर्विलोकन अधिकारिता का प्रयोग करते हुए, पारित तारीख 24 सितम्बर, 2014 के आक्षेपित निर्णय में कोई त्रुटि कारित नहीं की है और इस न्यायालय द्वारा इसमें हस्तक्षेप करने की कोई आवश्यकता नहीं है । (पैरा 25, 26, 27, 29, 30 और 31)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2013]	(2013) 8 एस. सी. सी. 320 : **कमलेश वर्मा** बनाम **मायावती और अन्य** ;	15, 28
[1985]	1985 की वाद सं. 471 में निर्णय तारीख 19 मई, 1985 : **सुंदर गुप्ता और अन्य** बनाम **सीता वासुदेव और अन्य** ;	8
[1965]	ए. आई. आर. 1965 एस. सी. 440 : **वी. एन. वासुदेव** बनाम **किरोड़ीमल** ।	20

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2019 की सिविल अपील सं. 5140.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 133 के अधीन अपील ।

पक्षकारों की ओर से सर्वश्री मुकुल रोहतगी, जयदीप गुप्ता, सिद्धार्थ लूथरा, ज्येष्ठ अधिवक्ता, विकास मेहता, रजत सहगल, रंजन मुखर्जी, मोहन प्रसाद गुप्ता, शेखर व्यास, रजत नायर, (सुश्री) नित्या राव, सूर्यकांत और (श्रीमती) अनिल कटियार, अधिवक्तागण

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति अजय रस्तोगी ने दिया ।

न्या. रस्तोगी – इजाजत दी गई ।

2. वर्तमान अपील, उच्च न्यायालय कलकत्ता द्वारा 2012 की आर. वी. डब्ल्यू. सं. 272 में पारित तारीख 24 सितम्बर, 2014 के आक्षेपित निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने तारीख 19 अक्तूबर, 2012 के आदेश को वापस मंगा लिया था और तारीख 31 मार्च, 2006 के आदेश को अपास्त करते हुए, 1985 के रिट याचिका सं. 18500 (रिट) को यथासंभव तत्परतापूर्वक इसके गुणागुणों पर सुनवाई करने के लिए प्रतिस्थापित कर दिया था जो हमारे समक्ष अपील में चुनौती की विषयवस्तु है ।

3. संक्षेप में, पक्षकारों के कई और साम्पार्श्विक तथा सुविस्तृत अभिवचनों से उद्भूत होने वाले तथ्य ये हैं कि प्रत्यर्थी सं. 1, 2 और 3 (रिट याचियों) किरोड़ीमल लोहरीवाला के प्रपौत्र हैं और प्रेमचंद गुप्ता के पुत्र हैं, दोनों अब मृत हैं, जो हिन्दू संयुक्त कुटुम्ब गठित करते थे और जो अपने संयुक्त नामों में कलकत्ता में अन्य संपत्तियों के साथ-साथ संपत्ति सं. 43, पृथ्वीराज रोड, नई दिल्ली (विषयवस्तु की संपत्ति) को धारित करते थे ।

4. वर्तमान अपीलार्थियों ने स्व. वी. एन. वासुदेव के विधिक उत्तराधिकारी होना अभिकथित किया है, जो आय-कर व्यवसायी था और स्व. किरोड़ीमल लोहरीवाला का वकील था, ने आय-कर विभाग द्वारा तारीख 18 अगस्त, 1964 को आयोजित खुले नीलामी में विषयवस्तु की संपत्ति को 2,60,000/- रुपए के प्रतिफल में क्रय किया था और वाद संपत्ति के संबंध में विक्रय प्रमाणपत्र तारीख 1 अप्रैल, 1965 को जारी किया गया था ।

5. अगस्त, 1957 में स्व. किरोड़ीमल लोहरीवाला ने उक्त संपत्ति जिसमें अन्य संपत्तियां सम्मिलित थीं, को स्वअर्जित संपत्तियों के रूप में दावा करते हुए, प्रेमचंद गुप्ता के विरुद्ध कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष 1957 की वाद सं. 1451 संस्थित किया और मध्यावधि में, कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा उक्त विषयवस्तु की संपत्ति के लिए एक शासकीय रिसीवर नियुक्त किया गया था, जिसने 1 मई, 1958 को उक्त संपत्ति का कब्जा ले लिया था । उक्त संपत्ति (43, पृथ्वीराज रोड, नई दिल्ली) तारीख 18 अगस्त, 1964 को 2,60,000/- रुपए के कुल रकम में स्व. वी. एन. वासुदेव के हिन्दू संयुक्त कुटुम्ब के सदस्य

शम्भू राम किरोड़ीमल के अभिकथित आय-कर बकायों की वसूली के लिए आय-कर विभाग द्वारा आरंभ प्रमाणपत्र कार्यवाहियों के अधीन विक्रय किया जाना तात्पर्यित था ।

6. इस प्रक्रम पर, स्व. किरोड़ीमल लोहरीवाला ने वी. एन. वासुदेव की ऐसी तात्पर्यित विक्रय के विरुद्ध आक्षेप उद्भूत किया, इस कारण से कि कलकत्ता उच्च न्यायालय से इसकी इजाजत नहीं ली गई है जिसे यद्यपि, तारीख 26 फरवरी, 1965 को मुख्य आयुक्त, दिल्ली द्वारा उलट दिया गया था । उसी समय पर, आकयर विभाग द्वारा 1957 की उक्त वाद सं. 1451 में एक आवेदन फाइल किया गया यह प्रार्थना करते हुए कि – (क) दिल्ली की संपत्ति का विक्रय करने के पूर्व न्यायालय की इजाजत लेने में लोप को माफ किया जाए और (ख) वी. एन. वासुदेव के पक्ष में दिल्ली की संपत्ति का उक्त विक्रय को पूरा करने की इजाजत दी जाए और उसे प्रभाव में लाने की भी इजाजत दी जाए । जिला संग्रहण अधिकारी, दिल्ली द्वारा स्व. वी. एन. वासुदेव के पक्ष में तारीख 18 अगस्त, 1964 के उक्त तात्पर्यित विक्रय की पुष्टि करने के प्रयोजन से विक्रय की पुष्टि का प्रमाणपत्र जारी किया गया था । इस प्रक्रम पर, कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा भारत संघ के तारीख 8 सितम्बर, 1965 के आवेदन पर आय-कर विभाग को यह स्वतंत्रता देना मंजूर कर लिया कि वह दिल्ली की संपत्ति को बेहतर क्रेता या क्रेताओं के लिए लोक नीलामी या प्राइवेट संधि द्वारा विक्रय के लिए रखे ताकि उसके लिए बेहतर मूल्य प्राप्त किया जा सके । कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा 8 सितम्बर, 1965 को पारित पश्चात्वर्ती आदेश का प्रभाव यह होगा कि जिला संग्रहण अधिकारी, दिल्ली के आदेश के संदर्भ में नीलामी विक्रय की पुष्टि के लिए इस न्यायालय के समक्ष परीक्षा करना उपयुक्त नहीं होगा ।

7. आय-कर विभाग और स्व. प्रेमचंद गुप्ता (प्रत्यर्थी सं. 1 से 3 के पिता) के बीच विस्तृत पत्राचार हुआ, जिनकी वर्तमान कार्यवाहियों में विस्तृत चर्चा किया जाना अपेक्षित नहीं है ।

8. इस प्रक्रम पर, प्रत्यर्थी सं. 1 से 3 ने जिला न्यायाधीश, दिल्ली के समक्ष तारीख 19 मई, 1985 को 1985 की वाद सं. 471 (**सुंदर गुप्ता और अन्य** बनाम **सीता वासुदेव और अन्य**[1]) फाइल की, इस बात

---

[1] 1985 की वाद सं. 471 में निर्णय तारीख 19 मई, 1985.

की घोषणा करने की ईप्सा करते हुए कि उन्हें वाद संपत्ति का स्वामी निरंतर बने रहने दिया जाए और नीलामी क्रेता वी. एन. वासुदेव, अपीलार्थियों के पूर्वाधिकारियों को संपत्ति की प्रकृति में किसी प्रकार का परिवर्तन करने से अवरुद्ध करते हुए, व्यादेश पारित किया जाए । निःसंदेह, आय-कर प्राधिकारी, वाद में पक्षकारों के रूप में अभिवाचित नहीं किए गए थे ।

9. प्रत्यर्थी सं. 1 से 3 ने भारत संघ और वर्तमान अपीलार्थियों के विरुद्ध कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष तारीख 18 अगस्त, 1964 की नीलामी के अधीन स्व. वी. एन. वासुदेव को दिल्ली की संपत्ति के तात्पर्यित विक्रय के बारे में 1985 की सी. ओ. सं. 18500 (रिट) के अधीन रिट याचिका फाइल की, यह घोषणा करने के लिए कि तारीख 18 अगस्त, 1964 का तात्पर्यित विक्रय और दिल्ली की संपत्ति के संबंध में तारीख 1 अप्रैल, 1965 के विक्रय की पुष्टि का प्रमाणपत्र जारी करने को अकृत और शून्य घोषित किया जाए और विषयवस्तु की संपत्ति को आय-कर प्राधिकारियों द्वारा कुर्की के अधीन बनाए रखा जाए ।

10. भारत संघ द्वारा फाइल आवेदन पर पारित कलकत्ता उच्च न्यायालय के तारीख 8 सितम्बर, 1965 के आदेश की सहायता लेते हुए, जिसका निर्देश किया गया था, संबंधित पक्षकारों द्वारा शपथपत्र/प्रति-शपथपत्र फाइल किए गए थे और रिट याचिका 1985 की सी. ओ. सं. 18500 (रिट) की सुनवाई हुई थी और कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा मार्च/अप्रैल, 1986 में निर्णय को आरक्षित रखा गया था और लगभग साढ़े चार वर्षों के पश्चात्, उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा निवेदनों पर विचार करते हुए, तारीख 26 अक्तूबर, 1990 को रिट याचिका खारिज कर दिया गया था और यह निष्कर्ष निकाला गया था कि चूंकि रिट याचियों को जिला न्यायाधीश, दिल्ली के न्यायालय के समक्ष वाद फाइल करने का वैकल्पिक उपचार प्रतिस्थापित कर दिया गया है जो यद्यपि, उस तारीख तक लंबित रहा जब तक निर्णय आरक्षित रहा (1985 की वाद सं. 471), उच्च न्यायालय के समक्ष उद्भूत सभी मुद्दों जिन्हें 1985 की वाद सं. 471 के लंबित रहने के दौरान पक्षकारों को उठाने के लिए खुला रखा गया था, किन्तु तथ्य यह है कि 1985 की वाद सं. 471 जो उस तारीख तक लंबित था, जब उच्च

न्यायालय द्वारा आरक्षित रखा गया था, जिसे मार्च/अप्रैल, 1986 में सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 9 के नियम 2 के अधीन मुख्य प्रतिवादियों को नोटिस तामील नहीं होने के कारण तारीख 3 अक्तूबर, 1986 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था और पक्षकारों में से किसी भी पक्षकार ने इस तथ्य की पश्चात्वर्ती प्रगति के बारे में न्यायालय की नोटिस में नहीं लाया, जिसका निर्देश किया गया है । इसके तत्काल पश्चात्, प्रतिवादी सं. 1 से 3 ने तारीख 26 अक्तूबर, 1990 के आदेश को वापस मंगाने/अपास्त करने और गुणागुणों पर रिट याचिका का विनिश्चय करने के लिए एक आवेदन फाइल किया ।

11. पक्षकारों की सुनवाई करने के पश्चात्, कलकत्ता उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने तारीख 20 नवम्बर, 1998 के अपने आदेश के अधीन प्रत्यर्थी सं. 1 से 3 द्वारा फाइल आवेदन को मंजूर कर लिया और गुणागुणों पर मामले की सुनवाई करने का निर्देश देते हुए, विषयवस्तु की संपत्ति के बारे में संव्यवहार करने से वासुदेव को अवरुद्ध करते हुए, तारीख 26 अक्तूबर, 1990 के आदेश को वापस मंगा लिया ।

12. वर्तमान अपीलार्थियों ने तारीख 20 नवम्बर, 1998 के आदेश के विरुद्ध अपील प्रस्तुत की । कलकत्ता उच्च न्यायालय के खंड न्यायपीठ ने तारीख 17 अगस्त, 2001 के अपने आदेश के अधीन तारीख 20 नवम्बर, 1998 के पुनर्विलोकन आवेदन पर आदेश वापस मंगाने के आदेश में हस्तक्षेप किए बिना अपील (1999 की एम. ए. टी. सं. 87) का निपटारा किया, किन्तु जैसा कि अभिलेखों से प्रतीत होता है, वर्तमान अपीलार्थियों ने तारीख 17 अगस्त, 2001 के आदेश को नोट करने के पश्चात्, इस न्यायालय के समक्ष 2001 की विशेष इजाजत याचिका (सिविल) सं. 22491 को प्रस्तुत करना समुचित समझा, जिसे आरंभिक प्रक्रम पर ही तारीख 10 जनवरी, 2002 को खारिज कर दिया गया था ।

13. इसके पश्चात्, वर्तमान अपीलार्थियों ने 1985 की रिट याचिका सं. 18500 (रिट) के निपटारे में 2005 की सी. ए. सं. 3557 के अधीन आवेदन फाइल किया, अन्य बातों के साथ-साथ, यह प्रार्थना करते हुए कि प्रत्यर्थियों को वाद संपत्ति का विक्रय करने के लिए किसी भी

विज्ञापन की कार्यवाही करने से अवरुद्ध कर दिया जाए क्योंकि इस प्रकार की कोई स्वतंत्रता उच्च न्यायालय द्वारा नहीं दी गई है । उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने पक्षकारों की सुनवाई करने के पश्चात्, यह अभिनिर्धारित किया कि उच्च न्यायालय के समक्ष कुछ भी लंबित नहीं था और इस प्रकार, तारीख 31 मार्च, 2006 के अपने आदेश के अधीन पूर्वोक्त प्रकीर्ण आवेदन को कायम नहीं रखे जाने योग्य अभिनिर्धारित किया ।

14. उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा पारित तारीख 31 मार्च, 2006 के आदेश को अपील में प्रत्यर्थियों द्वारा चुनौती दी गई, जिसे तारीख 19 अक्तूबर, 2012 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया, प्रत्यर्थियों की इस स्वतंत्रता के साथ कि दिल्ली में उसी वाद हेतुक पर नए सिरे से वाद फाइल कर सकते हैं, यदि इस प्रकार सलाह दी जाती है । प्रत्यर्थियों ने तारीख 19 अक्तूबर, 2012 के आक्षेपित निर्णय और तारीख 31 मार्च, 2006 के आदेश के विरुद्ध भी 2012 की आर. वी. डब्ल्यू. सं. 272 के अधीन पुनर्विलोकन आवेदन प्रस्तुत किया । तारीख 24 सितम्बर, 2014 के आक्षेपित आदेश द्वारा तारीख 19 अक्तूबर, 2012 के आदेश का पुनर्विलोकन किया गया और परिणामस्वरूप, तारीख 31 मार्च, 2006 के आदेश को अपास्त कर दिया गया और 1985 की रिट याचिका सं. 18500 (रिट) को इसके अपने गुणागुणों पर सुनवाई करने का निदेश दिया गया जो वर्तमान अपील में अपीलार्थियों की प्रेरणा पर चुनौती की विषयवस्तु है ।

15. अपीलार्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री मुकुल रोहतगी ने यह जोरदार तौर पर निवेदन किया कि प्रत्यर्थियों द्वारा फाइल वर्तमान पुनर्विलोकन आवेदन कायम रखे जाने योग्य नहीं है क्योंकि आधारों में से कोई भी आधार ऐसा नहीं है, जो न्यायालय की पुनर्विलोकन अधिकारिता के सिद्धांतों में लागू होता है जैसा कि सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 47 के नियम 1 के अधीन परिकल्पित है, जो पुनर्विलोकन आवेदन को ग्रहण करने के लिए आधारभूत सिद्धांतों को वर्णित करता है और इस न्यायालय ने **कमलेश वर्मा** बनाम **मायावती और अन्य**[1] वाले मामले में उन सिद्धांतों को अधिकथित किया है, जिनमें पुनर्विलोकन आवेदन को कायम रखे जाने योग्य कहा जा सकता है ।

---

[1] (2013) 8 एस. सी. सी. 320.

16. विद्वान् काउंसेल ने यह निवेदन किया कि वर्तमान मामले में, प्रत्यर्थी, पुनर्विलोकन आवेदन को कायम रखने के लिए सिद्धांतों की संयाचना करने में असफल रहे हैं और उच्च न्यायालय द्वारा अपनी पुनर्विलोकन अधिकारिता के अधीन पारित तारीख 24 सितम्बर, 2014 का आक्षेपित आदेश, प्रारंभिक तौर पर पुनर्विलोकन आवेदन को कायम रखने के बारे में अधिकथित आधारभूत विधि के सिद्धांतों को पूरा नहीं करते हैं और उच्च न्यायालय आक्षेपित आदेश में, न तो उन साक्ष्यों से नए और महत्वपूर्ण मामले को उजागर करने में समर्थ रहा है जो सम्यक् सतर्कता का प्रयोग करने के पश्चात् भी न तो पुनर्विलोकन आवेदक की जानकारी में था न ही अभिलेख के आमुख पर कोई भूल या प्रकट त्रुटि इंगित हुआ था अथवा न ही पुनर्विलोकन करने के लिए किसी अन्य पर्याप्त कारण को सुझाया था । दी गई परिस्थितियों में, कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा पारित तारीख 24 सितम्बर, 2014 का आक्षेपित आदेश, विधि में कायम रखे जाने योग्य नहीं है और इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप किया जाना अपेक्षित है ।

17. विद्वान् काउंसेल ने यह भी निवेदन किया कि प्रत्यर्थी सं. 1 से 3 ने वस्तुत:, बार-बार विधिक प्रक्रिया का दुरुपयोग किया है और 50 वर्षों से अधिक समय से विषयवस्तु की संपत्ति के बारे में मुकदमेबाजी जारी रखा है और 1985 की रिट याचिका सं. 18500 (रिट) को फाइल करने का उनका वास्तविक प्रयोजन आय-कर विभाग को कलकत्ता में अन्य संपत्तियों की कुर्की और उनका विक्रय करने से रोकना है । उनका मात्र यही अभिकथन है कि दिल्ली में वाद संपत्ति को विभाग द्वारा वैध तौर पर कब्जे में लिया गया है और वाद संपत्ति को नए सिरे से विक्रय के लिए रखा गया है । तथापि, तथ्य यह है कि वाद संपत्ति का नीलामी विक्रय, उक्त संपत्ति के स्वामी किरोड़ीमल लोहरीवाला द्वारा स्वीकार किया गया था जो उस उत्तर से प्रकट होता है जिसे उसने अपीलार्थियों के हित-पूर्वाधिकारी के विरुद्ध बेदखली के लिए वाद में आवेदन फाइल किया था और जिसका उल्लेख, विद्वान् एकल न्यायाधीश ने तारीख 26 अक्तूबर, 1990 के अपने आदेश में किया था ।

18. विद्वान् काउंसेल ने यह भी निवेदन किया कि उच्च न्यायालय

के विद्वान् एकल न्यायाधीश के तारीख 26 अक्तूबर, 1990 के विस्तृत निर्णय में गुणागुणों पर उद्भूत कतिपय आधारों पर विचार किया गया है और मात्र इस कारण कि विद्वान् न्यायाधीश ने अंततः, प्रत्यर्थियों को दिल्ली में लंबित वाद (1985 की वाद सं. 471) में प्रथम प्रेरणा पर सभी प्रश्नों को उद्भूत करने की स्वतंत्रता मंजूर की थी, जो वस्तुतः, उस तारीख तक लंबित था जब तक निर्णय को आरक्षित रखा गया था और जिसे तारीख 26 अक्तूबर, 1990 के निर्णय की उद्घोषणा के ठीक पूर्व खारिज कर दिया गया था किन्तु उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने सभी मुद्दों पर विचार किया था और उन सभी को तारीख 26 अक्तूबर, 1990 के अपने निर्णय में निरस्त कर दिया था ।

19. दी गई परिस्थितियों में, विद्वान् काउंसेल ने यह निवेदन किया कि उच्च न्यायालय की पुनर्विलोकन अधिकारिता के अधीन तारीख 26 अक्तूबर, 1990 के आदेश को वापस मंगाने और सभी प्रकार से पक्षकारों को हटाने से कुछ नहीं होगा, अपितु विधिक प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा और इसे नियंत्रण में रखने की आवश्यक है और यह कि इस कारण से ही अपीलार्थियों ने इस न्यायालय के समक्ष अपील फाइल किया बावजूद इसके कि आय-कर विभाग द्वारा वर्ष 1964 में वी. एन. वासुदेव हित-पूर्वाधिकारी के पक्ष में लोक नीलामी आयोजित किया गया था और तात्पर्यित विक्रय के पश्चात् तारीख 26 फरवरी, 1965 को संपत्ति के मूल स्वामी के आक्षेपों को नकराते हुए, उसकी पुष्टि कर दिया गया था और तारीख 1 अप्रैल, 1965 को विक्रय की पुष्टि का प्रमाणपत्र जारी किया गया था तब भी वे प्रश्नगत विषयवस्तु की संपत्ति का उपभोग करने में असमर्थ रहे और उन्हें वर्ष 1985 में पक्षकारों के रूप में हटा दिया गया वह भी नीलामी में रखी गई संपत्ति के 34 वर्षों के अधिक समय के पश्चात् जो न्याय के हित में नहीं है और इसमें इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप करने की आवश्यता है ।

20. दूसरी ओर, इसके विपरीत, प्रत्यर्थी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री जयदीप गुप्ता और श्री सिदार्थ लूथरा और श्री अशोक गुप्ता, व्यक्तिगत प्रत्यर्थी ने तारीख 24 सितम्बर, 2014 के आक्षेपित निर्णय का समर्थन करते हुए, यह निवेदन किया कि प्रश्नगत विषयवस्तु की

संपत्ति की नीलामी की कभी भी पुष्टि नहीं हुई थी और यह निवेदन किया कि फरवरी, 1957 में किरोड़ीमल लोहरीवाला (प्रत्यर्थियों के दादा) ने अपने आय-कर वकील के रूप में एक आय-कर व्यवसायी श्री वी. एन. वासुदेव (अपीलार्थी सं. 1 और 2 का पिता) को नियुक्त किया और अटर्नी गठित किया । वी. एन. वासुदेव ने अपने विश्वसनीय संबंधों का पूर्ण लाभ उठाया और एक नगण्य रकम 300/- रुपए प्रतिमाह पर विषय-वस्तु की संपत्ति का किराएदार हो गया । 1 मई, 1958 को कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा 1957 की वाद सं. 1451 में दिल्ली की संपत्ति को सम्मिलित करते हुए, विषयवस्तु की संपत्ति के लिए एक शासकीय रिसीवर नियुक्त किया था चूंकि वी. एन. वासुदेव ने दिल्ली की संपत्ति का कोई किराया संदत्त नहीं किया तथा स्वयं और किरोड़ीमल लोहरीवाला के बीच अपने वृत्तिक शुल्कों के विरुद्ध किरायों का समायोजन करते हुए एक काल्पनिक करार किया । इस न्यायालय ने बेदखली कार्यवाहियों से उद्भूत **वी. एन. वासुदेव** बनाम **किरोड़ीमल**[1] वाले मामले में वी. एन. वासुदेव को फटकारते हुए, यह अभिनिर्धारित किया कि वी. एन. वासुदेव ने आय-कर अधिकारी (क्योंकि दिल्ली की संपत्ति आय-कर विभाग के कुर्की के अधीन थी) को 300/- रुपए प्रतिमाह का संदाय नहीं किया है ।

21. विद्वान् काउंसेल ने यह भी निवेदन किया कि सिविल न्यायालय को आय-कर अधिनियम, 1961 की धारा 293 को ध्यान में रखते हुए, ऐसे मामलों पर विचार करने की कोई अधिकारिता नहीं है और प्रत्यर्थियों को मात्र यही उपचार उपलब्ध है कि वे संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका फाइल करे ।

22. विद्वान् काउंसेल ने यह भी निवेदन किया कि प्रत्यर्थियों की प्रेरणा पर फाइल 1985 की रिट याचिका सं. 18500 (रिट), वस्तुत: 26 अक्तूबर, 1990 को विनिश्चय के लिए आया किन्तु आय-कर अधिनियम, 1961 की धारा 293 के प्रभाव को नोट नहीं किया गया है और कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा पारित तारीख 8 सितम्बर, 1965 के आदेश का पारिणामिक प्रभाव जिसका निर्देश किया गया था और इस तथ्य का भी निर्णय प्राय: साढ़े चार वर्षों तक लंबित रहा, उसके पूर्व 1985 की वाद सं. 471 खारिज कर दी गई थी और दी गई

---

[1] ए. आई. आर. 1965 एस. सी. 440.

परिस्थितियों में, विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा निकाला गया यह निष्कर्ष कि सभी दलीलें, लंबित वाद (दिल्ली में) में उद्भूत किए जाने के लिए उपलब्ध थीं, मात्र मताभिव्यक्ति थी और इसे विषयवस्तु पर अभिलिखित निष्कर्ष नहीं कहा जा सकता था और उच्च न्यायालय द्वारा उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश के समक्ष उपस्थित होने वाले पक्षकारों को हटाने और 1985 की रिट याचिका सं. 18500 (रिट) को गुणागुणों पर प्रेषित करने को पुनर्विलोकन अधिकारिता के निबंधनों के परे नहीं कहा जा सकता है, जैसा कि विधि के अधीन परिकल्पित है ।

23. विद्वान् काउंसेल ने यह निवेदन किया कि यदि प्रत्यर्थियों की प्रेरणा पर फाइल 1985 की रिट याचिका सं. 18500 (रिट) को गुणागुणों पर नहीं सुना गया है तो वे उपचार विहीन रह जाएंगे, क्योंकि उनकी दलीलों पर सक्षम अधिकारिता के किसी न्यायालय द्वारा अभी तक विनिश्चय नहीं किया गया है और उन्होंने यह भी निवेदन कि यह किसी भी प्रकार से पक्षकारों को प्रतिकूलता कारित नहीं करता है, क्योंकि उन्हें 1985 की रिट याचिका सं. 18500 (रिट) की कार्यवाहियों में उद्भूत होने वाले सभी दलीलों को गुणागुणों पर प्रेषित करने के लिए पहले से ही हटा दिया गया है ।

24. हमने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुना और उनकी सहायता से अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों का परिशीलन किया ।

25. अभिलेख पर की सामग्रियों से यह प्रकट होता है कि विषय-वस्तु की संपत्ति (43, पृथ्वीराज रोड, नई दिल्ली) आय-कर विभाग द्वारा आरंभ प्रमाणपत्र कार्यवाहियों में 18 अगस्त, 1964 को शम्भूराम किरोड़ीमल, संयुक्त हिन्दू कुटुम्ब के सदस्य से 2,60,000/- रुपए की रकम के आय-कर बकायों की वसूली के लिए नीलामी क्रेता स्व. वी. एन. वासुदेव को विक्रय किया जाना तात्पर्यत थी । किरोड़ीमल ने वी. एन. वासुदेव को ऐसे तात्पर्यित विक्रय का विरोध किया क्योंकि इसके लिए कलकत्ता उच्च न्यायालय से इजाजत नहीं ली गई थी जिसे मुख्य आयुक्त, दिल्ली द्वारा उलट दिया गया था और तारीख 26 फरवरी, 1965 के आदेश द्वारा वी. एन. वासुदेव के पक्ष में तात्पर्यित विक्रय की

पुष्टि कर दी गई थी । इस प्रक्रम पर, 1957 की वाद सं. 1451 में आय-कर विभाग द्वारा आवेदन फाइल किया गया, यह प्रार्थना करते हुए कि (क) दिल्ली की संपत्ति को विक्रय के लिए रखने के पूर्व न्यायालय से इजाजत लेने में लोप को माफ किया जाए और (ख) वी. एन. वासुदेव के पक्ष में दिल्ली की संपत्ति के उक्त विक्रय को पूरा करने की इजाजत दी जाए और उसे प्रभाव में देने की भी इजाजत दी जाए । आय-कर विभाग द्वारा फाइल आवेदन पर, कलकत्ता उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने पक्षकारों के विरोधी दलीलों को नोट करने के पश्चात् तारीख 8 सितम्बर, 1965 को अपने आदेश में निम्नलिखित मत व्यक्त किया :–

"ए. एन. राय (इन चैम्बर्स)

किरोड़ीमल भिवानीवाला, किरोड़ीमल लोहरीवाला के रूप में भी जाना जाता था, जो सदर बाजार, रायगढ़, जिला मध्यप्रदेश का निवासी है जो इस न्यायालय की अधिकारिता के बाहर है

बनाम

1. प्रेम चंद गुप्ता, निवासी 181-ए, चितरंजन एवेन्यू, कलकत्ता, उक्त अधिकारिता के भीतर

2. पवन गुप्ता

3. सुन्दर गुप्ता

अंतिम दो 18 वर्ष की आयु से कम होने के कारण अवयस्क हैं, निवासी 181-ए, चितरंजन एवेन्यू, कलकत्ता, उक्त अधिकारिता के भीतर

4. श्रीमती असर्फी देवी **उर्फ** श्रीमती सुर्फी देवी, निवासी सदर बाजार, रायगढ़, जिला मध्य प्रदेश, उक्त अधिकारिता के बाहर

भारत संघ अपने आय-कर अधिकारी, रायगढ़ सिविल, रायगढ़ (जिसे इसमें इसके पश्चात् उक्त आवेदक संघ कहा गया है) की ओर से पिछले मार्च के तीसरे दिन की तारीख को मास्टर समन और उसकी सम्यक् तामील का सनत कुमार मुखर्जी के शपथपत्र

की पिछले अप्रैल की पांचवे दिन की पुष्टि और उक्त आवेदन की याचिका और रामदास, रामभरोसे मिश्रा का शपथपत्र जिसके सत्यापन में पिछले मार्च की 15 तारीख को पुष्टि और उक्त याचिका से संलग्न प्रदर्शों और क्रमश: ए, बी, सी और डी के रूप में चिन्हित और रायगढ़ के रामदास रामभरोसे मिश्रा का शपथपत्र जिसकी पिछले जून की 17 तारीख को पुष्टि जो सभी आज के दिन फाइल की गई है, का परिशीलन करने के पश्चात् और प्रतिवादियों की ओर से प्रेमचंद गुप्ता का एक शपथपत्र जिसकी पिछले मई की पांच तारीख को पुष्टि और इस दिन फाइल, का परिशीलन करने के पश्चात् और उक्त आवेदक संघ के विद्वान् अधिवक्ता श्री डी. गुप्ता और प्रतिवादियों (वादियों जो न तो व्यक्तिगत तौर पर अथवा न ही अधिवक्ता द्वारा अथवा अटर्नी द्वारा उपस्थित) के विद्वान् अधिवक्ता की सुनवाई के करने के पश्चात् ।

यह आदेश किया जाता है कि उक्त आवेदक संघ को दिल्ली की संपत्ति संयुक्त चल और अचल संपत्तियां होने के नाते जिनमें परिसर सं. 43, पृथ्वीराज रोड, नई दिल्ली की संपत्ति सम्मिलित है, इसके बेहतर क्रेता या जिससे बेहतर क्रेता पाया जा सकता है, या तो लोक निलामी द्वारा या प्राइवेट संधि द्वारा, विक्रय करने की स्वतंत्रता होगी ।

साक्षी, श्री हिमांशु कुमार घोष, मुख्य न्यायाधीश, कलकत्ता, पूर्वोक्त सितम्बर, के आठवें दिन, उन्नीस सौ पैंसठ ।

एस. के. मंडल - अटर्नी

सट्ट एंड सेन - अटर्नीगण

एस. बी. बनर्जी
20.1.1966
रजिस्ट्रार"

26. इसके बाद, आय-कर अधिनियम, 1961 की धारा 293 राजस्व/आय-कर प्राधिकारी के विरुद्ध किसी भी सिविल न्यायालय में वाद

फाइल करने से पूर्णतया वर्जित करता है और विधि का समादेश तब तक नोटिस जारी करने पर रोक बनाए रखता है, जब तक कि उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा 1985 की रिट याचिका सं. 18500 (रिट) में आदेश पारित नहीं कर दिया जाता है, जिसका विनिश्चय तारीख 26 अक्तूबर, 1990 को हुआ जब जिला न्यायाधीश, दिल्ली के समक्ष 1985 की सिविल वाद सं. 471 के अभिकथित लंबित रहते हुए पक्षकारों के नाम हटाने का आदेश दिया गया था, यद्यपि, इसे तारीख 26 अक्तूबर, 1990 का निर्णय उद्घोषित करने के ठीक पूर्व खारिज कर दिया गया था । एलपीए में उच्च न्यायालय के खंड न्यायपीठ ने प्रत्यर्थियों को दिल्ली में स्थित विषयवस्तु संपत्ति के संबंध में नया सिविल वाद फाइल करने की स्वतंत्रता दी थी और पक्षकारों में किसी भी पक्षकार ने आय-कर अधिनियम, 1961 की धारा 293 के अधीन परिकल्पित विधि के इस समादेश को न्यायालय के नोटिस पर नहीं लाया कि आय-कर विभाग के विरुद्ध सिविल वाद, विधि के अधीन कायम रखे जाने योग्य नहीं है, जिसे पक्षकारों के विरोधी दावों पर निष्कर्ष निकालते समय न्यायालय द्वारा भूल से लोप किया जाना प्रतीत होता है ।

27. उच्च न्यायालय द्वारा अपने पुनर्विलोकन अधिकारिता में इसे नोट नहीं किया गया था और यह निष्कर्ष निकाला गया था कि अभिलेख पर आमुख पर ही प्रकट त्रुटि प्रतीत होती है और परिणामत: तारीख 19 अक्तूबर, 2012 के आदेश को वापस मंगाने के लिए पुनर्विलोकन आवेदन मंजूर कर लिया था और प्रकीर्ण आवेदन में पारित तारीख 31 मार्च, 2006 के निर्णय और आदेश को अपास्त कर दिया था और 1985 की रिट याचिका सं. 18500 (रिट) को प्रतिस्थापित करते हुए, इसके गुणागुणों पर सुनवाई करने के लिए तारीख 24 सितम्बर, 2014 का आक्षेपित निर्णय दिया था ।

28. आधारभूत सिद्धांतों जिनमें पुनर्विलोकन आवेदन ग्रहण किया जा सकता है, **कमलेश वर्मा** (उपर्युक्त) वाले मामले में, इस न्यायालय द्वारा विस्तृत तौर पर परीक्षा की गई है, जिसमें इस न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :-

"20. इस प्रकार, उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए, पुनर्विलोकन को निम्नलिखित आधारों पर कायम रखा जा सकता है जैसा कि संविधि द्वारा अनुध्यात है ।

20.1 जब पुनर्विलोकन कायम रखा जाएगा –

(i) नए और महत्वपूर्ण मामले या साक्ष्यों का प्रकटीकरण जो सम्यक् सतर्कता का प्रयोग करने के पश्चात् भी आवेदक की जानकारी में नहीं आया था या उसके द्वारा प्रस्तुत नहीं किया जा सका था ।

(ii) अभिलेख पर आमुख पर प्रकट भूल या त्रुटि ।

(iii) कोई अन्य पर्याप्त कारण ।

शब्द 'कोई अन्य पर्याप्त कारण' का निर्वचन छज्जू राम **बनाम** नेकी [(1921-22) 49 आई. ए. 144] वाले मामले में किया गया है और इसका अनुमोदन इस न्यायालय द्वारा मोरन मार बास्सेलियास कैथोलिकॉस **बनाम** मोस्ट रेव मार पॉवलोस अथेनसियस [ए. आई. आर. 1954 एस. सी. 526] वाले मामले में किया गया, जिसमें इसका अभिप्राय यह बताया गया कि "पर्याप्त कारण के आधारों में से कम से कम एक आधार नियमों में विनिर्दिष्ट आधारों के सदृश्य होना चाहिए ।" इसी प्रकार के सिद्धांत को भारत संघ **बनाम** संदूर मनगनेश एंड आयरन ओर्स लिमिटेड [(2013) 8 एस. सी. सी. 337] वाले मामले में दोहराया गया है ।

20.2 जब पुनर्विलोकन कायम रखे जाने योग्य नहीं होगा –

(i) पुराने और इनकार किए गए तर्कों की पुनरावृत्ति करना, न्यायनिर्णयन का निष्कर्ष निकालने के लिए पुन: खोलने हेतु पर्याप्त नहीं होता है ।

(ii) नगण्य महत्व के सूक्ष्म भूल ।

(iii) पुनर्विलोकन कार्यवाहियां, मामले की मूल सुनवाई के बराबर नहीं हो सकती हैं ।

(iv) पुनर्विलोकन कायम रखे जाने योग्य नहीं होता है, जब तक कि आदेश के आमुख पर प्रकट तात्विक त्रुटि नहीं होती है, इसकी अकाट्यता को दुर्बल नहीं बनाती है अथवा इसके परिणामस्वरूप घोर अन्याय नहीं होता है ।

(v) छल-कपट में अपील के माध्यम से कोई पुनर्विलोकन नहीं होता है जिसके द्वारा एक त्रुटिपूर्ण विनिश्चय की पुन: सुनवाई होती है और उसे सही किया जाता हो, अपितु, यह मात्र प्रत्यक्ष त्रुटि पर ही हो सकती है ।

(vi) विषय पर मात्र दो मतों की संभाव्यता, पुनर्विलोकन के लिए आधार नहीं हो सकता है ।

(vii) अभिलेख के आमुख पर प्रकट त्रुटि ऐसी त्रुटि नहीं होनी चाहिए जिसे बाहर निकाला जाना हो या खोजा जाना हो ।

(viii) अभिलेख पर के साक्ष्यों का मूल्यांकन, पूर्णतया अपील न्यायालय की अधिकारिता के भीतर होना चाहिए, इसे पुनर्विलोकन आवेदन में अग्रिम तौर पर किए जाने की अनुज्ञा नहीं दी जा सकती है ।

(ix) पुनर्विलोकन कायम रखे जाने योग्य नहीं होता है, जब मुख्य मामले में तर्क देते समय उसी प्रकार की ईप्सित अनुतोष को नकार दिया गया है ।"

29. उपर्युक्त सिद्धांतों की प्रतिपादना को नोट करते हुए, हम अभिलेख पर के तथ्यों पर विचार करते हैं और इससे यह प्रकट होता है कि आय-कर अधिनियम, 1961 की धारा 293 के प्रभाव का पुनर्विलोकन में निर्णय के अधीन भूल से लोप किया गया है और इसके अलावा भारत संघ द्वारा 1957 की सिविल वाद सं. 1451 में फाइल तारीख 8 सितम्बर, 1965 के आवेदन पर उच्च न्यायालय के आदेश के पारिणामिक प्रभाव से रिट कार्यवाहियों में परीक्षा किया जाना अनुज्ञात हो गया और यह पुनर्विलोकन आवेदन के उत्तर में आय-कर विभाग द्वारा प्रतिरक्षा था और इस न्यायालय के समक्ष भी अपने इस प्रति-शपथपत्र में

कि नीलामी विक्रय में जिसे अगस्त, 1964 में आयोजित किया गया था, न्यायालय से अनुज्ञा प्राप्त नहीं की गई थी और उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा 1957 की वाद सं. 1451 में तारीख 8 सितम्बर, 1965 के उनके आवेदन पर आदेश पारित करने के पश्चात् प्रश्नगत विषय संपत्ति के संदर्भ में, आय-कर विभाग द्वारा आयोजित विक्रय नीलामी निश्चित तौर पर प्रभावित होगी और कार्यवाहियों में सभी प्रकार से उनका यही आधार था ।

30. हमारा यह निष्कर्ष है कि कलकत्ता उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने 1985 की रिट याचिका सं. 18500 (रिट) को सुना और मार्च/अप्रैल, 1986 के लिए निर्णय को आरक्षित रखा और तारीख 26 अक्तूबर, 1990 को लगभग साढ़े चार वर्ष पश्चात् उद्घोषित निर्णय में जिला न्यायाधीश, दिल्ली के समक्ष लंबित सिविल वाद में अपनी प्रतिरक्षा में सभी दलीलों को उद्भूत करने से पक्षकारों को निकालने से स्वयंमेव ही यह उपदर्शित होता है कि एकल न्यायाधीश गुणागुणों पर अपनी राय अभिव्यक्त करने के लिए सहमत नहीं थे, सुस्पष्टतया, इस कारण से कि यदि निष्कर्ष अभिलिखित किया जाता है तो यह जिला न्यायालय, दिल्ली में लंबित अभिकथित वाद में परीक्षा किए जाने वाले मुकदमे में पक्षकारों के अधिकारों के प्रतिकूल रूप से प्रभावित करेगा जिसे यद्यपि उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा तारीख 26 अक्तूबर, 1990 को निर्णय उद्घोषित करने के ठीक पूर्व तारीख 3 अक्तूबर, 1986 को खारिज कर दिया गया था ।

31. दिए गए तथ्यों और परिस्थितियों में, हम, कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष प्रत्यर्थियों की प्रेरणा पर फाइल 1985 की रिट याचिका सं. 18500 (रिट) में उद्भूत गुणागुणों पर विवाद्यकों का विस्तृत वर्णन नहीं करना चाहते हैं, किन्तु, यदि सिविल वाद कायम रखे जाने योग्य नहीं था, जैसा कि आय-कर अधिनियम, 1961 की धारा 293 को ध्यान में रखते हुए अभिकथित किया गया है और यह प्रत्यर्थियों तथा आय-कर विभाग का तात्पर्यित प्रतिरक्षा था और तारीख 8 सितम्बर, 1965 के आदेश का पारिणामिक प्रभाव जिसके प्रतिनिर्देश हमारे समक्ष किया गया है, से पक्षकार को कोई उपचार नहीं मिल सकता है और

विधि के न्यायालय के समक्ष पक्षकार की जो भी शिकायत होती है, उस पर उसके स्वयं के गुणागुणों पर परीक्षा की जाती है । हमारे सुविचारित राय में, उच्च न्यायालय ने अपनी पुनर्विलोकन अधिकारिता का प्रयोग करते हुए, पारित तारीख 24 सितम्बर, 2014 के आक्षेपित निर्णय में कोई त्रुटि कारित नहीं की है और इस न्यायालय द्वारा इसमें हस्तक्षेप करने की कोई आवश्यकता नहीं है ।

32. हम यह स्पष्ट करते हैं कि हमारे द्वारा जो भी मत व्यक्त किया गया है, वह मात्र वर्तमान अपील के निपटारे के प्रयोजन के लिए है और 1985 की रिट याचिका सं. 18500 (रिट) का विनिश्चय, कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा विधि के अनुसरण में, स्वयं उसके गुणागुणों पर पक्षकारों की सुनवाई करने के पश्चात् किया जाएगा । चूंकि विवाद्यक, पर्याप्त रूप से लंबे समय से लंबित है, इसलिए, हम यह प्रत्याशा करते हैं कि उच्च न्यायालय मामले को वरीयता देगा और तत्परतापूर्वक यथासंभव रिट याचिका का विनिश्चय करेगा ।

33. अपील में कोई गुणागुण नहीं है और तद्नुसार, इसे उपर्युक्त मताभिव्यक्तियों के साथ खारिज किया जाता है । खर्चे का कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

34. लंबित आवेदन/आवेदनों, यदि कोई हों, को भी निपटाया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

क.